अध्याय पहला

नागार्जुन : जीवनवृतान्त /

जीवनी -

आधुनिक हिंदी उपन्यास आँचलिक पुट में प्रस्तुत कर उन्हें समाज के निम्न वर्गों के अनवरत शोषण तथा उससे जन्मे आक्रोश का विस्तृत अंकन अपनी कृतियों में करनेवाले, "बाबा" नाम से पुकारे जानेवाले श्री वैधनाथ मिश्र जी का जन्म कब हुआ यह उन्हें भी ठीक तरह से ज्ञात नहीं है। उनके जन्म के बारेमें विद्वानों में मत भिन्नता रही है, जो निम्न लिखित है -

"डॉ. जयकांत मिश्र ने "ए हिस्ट्री आव मैथिली लिट्रेचर" में उनका जन्म सन् १९०८ माना है। हिंदी साहित्य कोश में उनका जन्म सन् १९१० दिया गया है। डॉ. प्रकाशचंद्र भट्ट ने उनका जन्म १९११ ई., जून मास की किसी तिथि [जेष्ठ मास की पूर्णिमा] को माना है। डॉ. - ज्ञानेशदत्त हरित ने भी अपने अप्रकाशित शोध-प्रबंध "नागार्जुन-व्यक्तित्व और कृतित्व" में सन १९११ को ही उनके जन्म का वर्ष माना है।" [१]

डॉ. प्रभाकर माचवे ने कहा है कि -

"१९११ ईस्वी में जेष्ठ मास की पूर्णिमा को, यानी जून में किसी तारीख को वे जन्मे, ऐसा मान लिया जाता है।" [२]

बाबूराम गुप्तजी ने नागार्जुन की जन्मतिथि के संबंध में उनकी नानी को प्रमाण मानते हुए कहा है -

---

१. बाबूराम गुप्त - उपन्यासकार नागार्जुन - पृ. १.
श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३., प्रथम संस्करण - १९८५.

२. डॉ. प्रभाकर माचवे - आज के लोकप्रिय हिंदी कवि नागार्जुन - पृ. ३., राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली - ६

"निम्न-मध्य वर्ग की अधिकांश संतानों के समान नागार्जुन की जन्मतिथि का कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।..... उनकी जन्मतिथि के बारेमें यदि कोई प्रमाण है तो उनकी नानी, जिनके अनुसार जेठ के महीने में किसी दिन नागार्जुन का जन्म हुआ था। नागार्जुन ने स्वयं भी सन् १९११ में ही अपना जन्म स्वीकार किया है।" [१]

इन सभी विद्वानों के मतों को देखने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बाबा नागार्जुन का जन्म सन् १९११ में हुआ होगा।

नागार्जुन का जन्म निम्न मध्यवर्गीय मैथिल ब्राह्मण परिवार में हुआ है। उनका गोत्र "वत्स" और कुल "पलिवाड समोल" है। परंतु जिस तरह उनके जन्म के बारेमें विद्वानों मे मत भिन्नता दिखाई देती है उसी तरह उनके जन्म स्थान के बारेमें भी विद्वानों में मत-भिन्नता दिखाई देती है जो निम्न लिखित है -

डॉ. प्रभाकर माचवे जी उनके जन्मस्थान के संबंधमें कहते है -

"नागार्जुन का जन्म ननिहाल के ग्राम सतलखा, पोष्ट मधुबनी, दरभंगा में हुआ। पर स्कूल आदि में तरौनी, पिता के ग्राम को ही जन्मस्थान लिखाया गया।" [२]

बाबूराम गुप्त जी ने इसी मत को पुष्टि देते हुए कहा है -

---

१. बाबूराम गुप्त - उपन्यासकार नागार्जुन - पृ. १-२, श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३, प्रथम संस्करण - १९८५.

२. डॉ. प्रभाकर माचवे - आज के लोकप्रिय हिंदी कवि नागार्जुन - पृ. ३., राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली - ६.

"तरौनी गाँव जो नागार्जुन का पितृग्राम है, अब तक उसे ही उनका जन्मस्थान माना जाता रहा है, लेकिन वास्तव में, नागार्जुन का जन्म उनके ननिहाल "सतलखा" में हुआ।" [1]

विजय बहादुर सिंह ने भी उनका जन्म ननिहाल में ही स्वीकार किया है –

"यों उनका जन्म तरौनी में न होकर ननिहाल सतलखा में हुआ था।" [2]

इन मतों को ध्यान में लेते हुए और साथ ही साथ उनके नानी की बात ध्यान में रखते हुए यह अंदाज कर सकते हैं कि नागार्जुन का जन्म ग्राम सतलखा ननिहाल में हुआ होगा।

नागार्जुन तीन नामों से हिंदी साहित्य में परिचित हैं। जन्म नाम वैद्यनाथ मिश्र है, संस्कृत और मैथिली साहित्य में "यात्री" नाम से परिचित हैं, तो हिंदी साहित्य में "नागार्जुन" नाम से जाने जाते हैं। उनके नाम के बारेमें निम्न लिखित संदर्भ प्राप्त होते हैं –

"नागार्जुन के वैद्यनाथ मिश्र नाम के पीछे भारतीय आस्तिक पिता का वात्सल्य पूरित ह्रदय है, ... कहा जाता है कि, उनके पिताने वैद्यनाथ धाम में एक माह रहकर अनुष्ठान किया था, जिसके फल स्वरूप नागार्जुन का जन्म हुआ। परिणामत: इस नवशिशु को दीर्घजीवी देखने की कामना से

---

१. बाबूराम गुप्त – उपन्यासकार नागार्जुन – पृ. ३.
श्याम प्रकाशन, जयपुर – ३, प्रथम संस्करण – १९८५.

२. विजय बहादुर सिंह – नागार्जुन का रचना संसार – पृ. १४,
संभावना प्रकाशन, हापुड – १, प्रथम संस्करण – १९८२.

"वैद्यनाथ धाम" पर ही माँ-बाप ने बच्चे का नाम वैद्यनाथ मिश्र रखा।" [1]

"पिता गोकुल मिश्र और माँ उमादेवी को लगातार पाँच संतानें हुई और चल बसीं। हारकर गोकुल मिसिर ने वैद्यनाथ धाम जाकर महीने भर का अनुष्ठान किया और जब छठवीं संतान ने जन्म लिया तो आस्थाप्रती दम्पति ने कुलदीपककी रक्षा के लिए उसे बाबा वैद्यनाथ का ही आशीर्वाद मानते हुए नामकरण वैद्यनाथ किया।" [2]

"वह घरवाली, वह गरीब ब्रामहणी एक के बाद एक चार बच्चों को जन्म देती है, मगर बचता कोई नहीं। तब वैद्यनाथ धाम की विशेष सेवा करता है मिसिर परिवार और जो बालक जन्म लेता है, जीवित रहता है, उसका नाम रखा जाता है ... वैद्यनाथ मिसिर।" [3]

"पिता की कई सन्तानें नहीं बचीं। वैद्यनाथ की मानता से ये अकेले बचे।" [4]

नागार्जुन का जन्म वैद्यनाथ की मनौती के फलस्वरूप हुआ। वैद्यनाथ मिश्र नाम के पीछे आस्थाप्रती भाव है। क्यों कि घर के लोगों को भय सताता रहा कि, यह बालक एक न एक दिन आपने माँ बाप को ठगाकर

---

१. बाबूराम गुप्त - उपन्यासकार नागार्जुन - पृ. २, श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३., प्रथम संस्करण - १९८५.

२. विजय बहादुर सिंह - नागार्जुन का रचना संसार - पृ. १३, संभावना प्रकाशन, हापुड - १, प्रथम संस्करण - १९८२.

३. संपादक नामवर सिंह - आलोचना त्रैमासिक - अंक ५६-५७, पृ. ९, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नयी दिल्ली - २, जाने.-अप्रैल - १९८१.

४. डॉ. प्रभाकर माचवे - आज के लोकप्रिय हिंदी कवि नागार्जुन पृ. ३, राजपाल एन्ड सन्ज, दिल्ली - ६.

चला जायेगा। इसलिए पहले से उन्हे बडे प्यार से "ठक्कन" कहा जाने लगा और ऐसा आग्रह उनकी बुआजी ने भी किया था। स्वयं नागार्जुन भी इस लोकप्रिय नाम के संबंध में कहते है -

"हम गाँव जायेगें तो बूढ़े लोग अब भी बुलायेंगे, अरे ठक्कन! नागार्जुन कहने से नहीं चीन्हेंगे ... समझ गये ना ?" [१]

संस्कृत और मैथिली में नागार्जुन जी "यात्री" के नाम से लिखते है -

"पैदा होते ही जिसके प्रयाण कर जाने की आशंका से कुल परिवार के लोग आशंकित थे, वही बादमें चलकर "यात्री" नाम से मैथिली उपन्यास और कविताएँ लिखने लगा।" [२]

नागार्जुन जी इस नाम के संबंध में एक स्थान पर स्वयं कहते हैं -

"वैसे मेरा पहला साहित्यिक नाम "यात्री" था। संस्कृत और मैथिली में "यात्री" के नाम से ही लिखता रहा हूँ। बहुत से लोगों को तो पता भी नहीं है कि "यात्री" और नागार्जुन" एक ही व्यक्ति है।" [३]

"नागार्जुन" नाम कैसे पड गया, इसे स्पष्ट करते हुए स्वयं एक स्थानपर कहते हैं -

---

१. संपादक नामवर सिंह - आलोचना त्रैमासिक अंक - ५६-५७- नागार्जुन विशेषांक - पृ. ९ - राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-२, जनवरी - मार्च - अप्रैल - जून - १९८१.

२. विजय बहादुर सिंह - नागार्जुन का रचना संसार - पृ. १३ संभावना प्रकाशन, हापुड - १., प्रथम संस्करण - १९८२.

३. संपादक नरेंद्र कोहली - बाबा नागार्जुन - पृ. १४, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - २,, प्रथम संस्करण - १९८७.

"मैं राहुल जी के साथ यात्रा पर निकल गया ... फिर हम लंका गए। वहाँ मैं बौध्द भिक्षु हो गया। उसी स्थान पर मुझे नागार्जुन नाम दिया गया, जो चल रहा है।" [1]

इस संदर्भ में बाबूराम गुप्त कहते हैं कि -

"भारत के विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करते हुए नागार्जुन सन् १९३६ के अंत में सिंहल द्वीप [लंका] चले गये। वहीं पर उन्होंने गृहस्थ रूप छोडकर चीवर धारण किया। वहाँ उन्होंने बौध्द जगत् के प्रख्यात, लंका के प्राचीन, विद्यापीठ - विद्यालंकार - परिवेण में पहुँच बौध्द धर्म में दीक्षा प्राप्त की और बौध्द भिक्खु बन गये। वे प्रख्यात बौध्द तत्ववेत्ता नागार्जुन के दार्शनिक ग्रंथों का अनुवाद करना चाहते थे और उसी समय उन्होंने वैद्यनाथ मिश्र के स्थानपर अपना नाम "भिक्षु नागार्जुन" कर लिया।" [2]

नागार्जुन के पिता गोकुल मिश्र घुमक्कड, रूढ़ीवादी, दरिद्री, कठोर और फक्कड तबियतवाले व्यक्ति थे, तो माता उमादेवी सरल हृदयी, परिश्रमी, ईमानदार महिला थी।

नागार्जुन की प्रारंभिक शिक्षा गाँव में ही संस्कृत पाठशाला में प्राचीन पध्दति से हुई। "प्रथमा" परीक्षा के बाद "व्याकरण मध्यमा" करने के लिए गनौली के संस्कृत विद्यालय में गये। इसके पश्चात् चार साल काशी में रहकर संस्कृत "आचार्य" की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १९३० में जैन मुनियों के संपर्क में वाराणसी में उन्होंने प्राकृत और पाली भाषा का अध्ययन किया। तत्पश्चात् कलकता में उन्होंने पंधरह रुपये की छात्रवृती और मुफ्त आवास

---

१. संपादक नरेंद्र कोहली - बाबा नागार्जुन - पृ. १४,
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - २, प्रथम संस्करण - १९८७.

२. बाबूराम गुप्त - उपन्यासकार नागार्जुन - पृ. ७
श्याम प्रकाशन, जयपुर - ३. - प्रथम संस्करण - १९८५.

प्राप्त करते हुए "काव्यतीर्थ" का अध्ययन शुरु किया, परंतु अध्ययन अधुरा ही छोडकर सन् १९३४ में सहारनपुर में सौ रुपये मासिक वेतनपर प्राकृत से हिंदी में अनुवाद करते रहें।

जब नागार्जुन जी राहुल सांकृत्यायन जी के साथ भारत भ्रमण करते हुए सिंहलद्वीप में गये। तब वहाँ बौध्द धर्म में दीक्षित होकर विद्यालंकार परिवेण में तीन साल तक रहकर बौध्द धर्म ग्रंथों का अध्ययन करते रहें। वहीं पर कामचलाऊ अंग्रेजी भी सीख ली। वैसे तो उनकी मातृभाषा मैथिली है परंतु घुमक्कडी के कारण उन्होंने पाली अर्धमागधी, सिंहली, तिब्बती, मराठी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी आदि भाषाओं में पढना, लिखना सीख लिया है। नागार्जुन की तुलना कबीरदास के साथ करते हुए डॉ. प्रभाकर माचवे जी कहते हैं कि -

"शिक्षा संस्कृत शाला में, पैतृक विद्या-निधि जो भी घर में पाई। बाद में नागार्जुन ने किसी अंग्रेजी स्कूल, कालिज, युनिवर्सिटी का मुँह नहीं देखा। कोई परीक्षाएँ पास नहीं की। जिन्दगी की खुली पुस्तक से कबीर की तरह "आँख की देखी" सीखा।" [१]

उन्नीसवी वर्ष की आयु में नागार्जुन का विवाह अठारह वर्षीय अपराजिता देवी से हुआ। नागार्जुन के मन में अपनी पत्नी के प्रति सदैव सहानुभूति की भावना रही है। परंतु यायावरी जीवन के कारण उचित स्नेह नहीं दे सके। सन् १९३४ से १९४१ ई. तक घर छोडकर भ्रमण करते रहे। इसके पश्चात् फिर गृहस्थी में निमग्न रहें। उनको कुल छः संताने हैं - चार पुत्र-शोभाकांत, सुकांत, श्रीकांत, श्यामकांत और दो पुत्रियाँ- उर्मिल और मंजू। परंतु उपेक्षा वृत्ति एवं निर्धनता के कारण कोई भी पुत्र या पुत्री

---

१. डॉ. प्रभाकर माचवे "आज के लोकप्रिय हिंदी कवि नागार्जुन पृ. ३-४ - राजपाल एन्ड सन्ज, दिल्ली - ६

उच्च विद्याभूषित नहीं हो सका। पुत्र सुकांत आजकल मैथिली में कथाकार के रूप में परिचित हो रहा है।

नागार्जुन जी का निर्वाह मुख्यत: साहित्य निर्मिती के माध्यम से प्रकाशकों से प्राप्त होनेवाली रायल्टी और देहात में होनेवाली थोडी खेती बाडी पर आश्रित है। नागार्जुन पहले-पहले "बुढवर विलाप" नाम से आठ-आठ पेज की दो "किताबिया" छपवाकर स्वयं ही रेलगाडी में बिकते रहते थे। इससे मिलनेवाली आमदनीपर गृहस्थी चलाते थे। परंतु उनके पिताजी के नौकरी संबंधी आग्रह के कारण लुधियाना में कुछ दिनों तक जैन मुनी उपाध्याय आत्माराम जी के साहित्य निर्मिति कार्य में सहयोग देते रहे परंतु यायावरी जीवन और वेतन भोगी बनना अस्वीकार होने के कारण उन्होंने नौकरी छोड दी।

उनका घुमक्कडपन वैसे तो उन्हें पैतृक संस्कार के रूप में ही मिला है। जिससे उन्होंने जीवन का अधिकांश काल यायावरी में ही बिताया है। इस काल में विभिन्न प्रांत-पंजाब, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, काठियावाड, सिंहद्वीप घूमते-घूमते वहाँ का प्राकृतिक रूप, लोक जीवन, साहित्य, भाषा, संस्कृती, धर्म आदि संबंधी ज्ञान प्राप्त किया।

सन् १९३८ में सिंहलद्वीप से भारत लौटे। कुछ दिनों के बाद तिब्बत यात्रा पर चले परंतु घोडे पर से गिरने के कारण इस यात्रा को अधुरी छोडकर वाराणसी लौटे। यहाँ रहकर किसान आंदोलन में शरीक हुए। इसी कारण उन्हें ब्रिटीश सरकार ने हजारीबाग में दस महिनोंतक जेल में बंद किया। सन् १९४० में गुप्त रूप मे परिपत्र छपवाने के कारण दुबारा भागलपुर जेल में आठ महिनोंतक कैद हुए। सन् १९४४ में पंजाब यात्रा पूरी करते हुए बनारस में भारतीय ज्ञानपीठ के दफ्तर में कुछ दिनोंतक काम करते रहे। इसके बाद सन् १९४९ में वर्धा में राष्ट्रभाषा प्रचार समिती में कार्य करते रहे। तत्पश्चात् सन् १९५२-५३ में इलाहाबाद में रहे। तो सन् १९७१ में मैथिली साहित्यकार

के नाते रूस की यात्रा करने गये। उनकी यायावरी के संबंध में विजय बहादुर सिंह कहते है कि -

"नागार्जुन एक शहर से दूसरे शहर की यात्रा करते रहे। कभी इलाहाबाद, कभी पटना, कभी कलकत्ता, कभी दिल्ली। और जहाँ से भी मन ऊबा तो सुदूर छत्तीस गढ के अंचलों में रायपुर, गुजरात के बडौदा, अहमदाबाद, मध्यप्रदेश के सागर, भूपाल, जबलपुर, विदिशा, उज्जैन, बुन्देल खंड के अपने मित्र केदारनाथ अग्रवाल के यहाँ। नागार्जुन को इस निमित्त बुलाना नहीं पडता। वे खुद ब-खुद एक-न एक दिन एकाध वाक्य की चिट्ठी के बाद आ धमकते हैं। यात्रा उन्हे स्वस्थ करती है ऐसा उनका पक्का विश्वास है।" [१]

व्यक्तित्व -

बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार तथा यायावरी ही जीवन का अभिन्न अंग माननेवाले नागार्जुन कें संबंध में "आलोचना" त्रैमासिक के संपादक नामवर सिंह कहते हैं -

"मँझोले कद के नागार्जुन स्वभाव से न सख्त हैं, न बेलचक। छरेरा बदन। निकलती हुई गर्दन। गोल-गोल गुलट्टी आँखें। जरा छोटी। चेहरा-मोहरा कुछ इसतरह का कि जिसे देख पूरे इलाके का मुँह माथा चमक उठे।" [२]

नागार्जुन सफेद खादी का कुर्ता और धोती या पाजमा पहनते हैं।

---

१. विजय बहादुर सिंह - नागार्जुन का रचना संसार - पृ. ३२ संभावना प्रकाशन, हपुड - १, प्रथम संस्करण - १९८२.

२. संपादक नामवर सिंह - आलोचना - त्रैमासिक - पृ. १२, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नयी दिल्ली - २ - अंक जनवरी - मार्च - अप्रैल - जून - १९८१.

रहन-सहन से बहुत सीधे-सादे दिखाई देते हैं। वर्ण से श्यामवर्णीय हैं। वैसे तो वे ग्राम्यत्व से अधिक प्रभावित होने के कारण उनमें सरल जीवन का सौष्ठत्व एक आकर्षण के रूप में रहा है।

वे एकांत प्रेमी जरुर हैं परंतु सभा-सम्मेलन आदि स्थानों में मिलते रहते हैं। वे आत्मप्रचार तथा "पब्लिक गेज" से हमेशा दूर रहना चाहते हैं। पठन-पाठन में और चिंतन में विशेष रुचि रखते हैं। वे स्वभाव से विद्रोही होने के कारण अपने लेखन से आडम्बरों, रुढ़ियों तथा विषमताओं के प्रति सदैव रचनात्मक दिशा का प्रदर्शन करते रहे हैं।

नागार्जुन दमें के पुराने रोगी होने के कारण अधिकतर गर्मपानी का ही प्रयोग करते हैं, खान-पान में भी शुध्द शाकाहारी रहे हैं। उनका जीवन "निराला" की भाँति सदैव अभावग्रस्त रहा है परंतु अत्यंत स्वाभिमानी है, पैसे के लिए किसी के सामने हाथ नहीं फैलाते। इसी कारण कोई भी प्रलोभन उन्हें झुका नहीं सकता। वे जनपद के संरक्षण और भाषा विकास में अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। उनके संबंध में विजय बहादुर सिंहजी का कहना है -

"नागार्जुन की किताबें अब तो काफी संख्या में छपने और बिकने लगी हैं। बेटे कमाने लगे हैं। विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम बिना नागा बाबा के पूरे नहीं होते। तब भी उनकी चाल नहीं बदली है। वही एक अदद झोला, वही देशी चाल-ढाल, वैसी ही आग और वैसीही तड़प ।.. यद्यपि नागार्जुन अड़सठवें को भी आँख मारते हुए आगे बढ़ रहे हैं। वही फक्कड़ाना अन्दाज। वहीं गुस्सा फटकार। वही नेह-छोह। वही सादगी। वही विकलता। जैसे जीवन में वैसे ही कविता में भी।" [१]

---

१. विजय बहादुर सिंह - नागार्जुन का रचना संसार - पृ. ३७, संभावना प्रकाशन, हापुड - १ - प्रथम संस्करण - १९८२.

बाबूराम गुप्त ने प्रेमचंद, निराला और कबीर के साथ नागार्जुन की तुलना करते हुए कहा है –

"नागार्जुन घुमक्कड और अक्खाड स्वभाव के हैं। प्रेमचंद सी भारतीय कृषक, मजदूर के प्रति आत्मियता, निराला-सा फक्कडपन और अक्खाडपन तथा अनुचित बातों पर कबीर-सी फटकार सब का मिला-जुला रूप ही नागार्जुन है।" [१]

वैसे तो नागार्जुन सबल व्यक्तित्व के धनी है। उनके व्यक्तित्व में सरलता और दृढता का अद्भूत समन्वय है। वे राजनीतिक तथा किसान आंदोलनों से और साहित्य से मजदूरों, किसानों, दलितों-पिडितों के प्रति, सर्वहारा वर्ग के प्रति लडते रहे हैं, सांस्कृतिक प्रतिनिधि बनकर साहित्य सृजन करते रहे हैं। वे अपने प्रति जरूर लापरवाह है परंतु समाज के प्रति सतत चिंतनशील और संवेदनशील रहे हैं।

<u>कृतित्व –</u>

नागार्जुन ने जो भोगा है, देखा है, अनुभव किया है उसी की अभिव्यक्ति एक समाजवादी और मानवतावादी साहित्यिक के रूप में अपनी बहुमुखी प्रतिभा-संपन्नता के साथ की है। उन्होंने उपन्यास, कहानी, जीवनी, निबंध, आलोचना, बाल साहित्य, एवं कविता आदि साहित्यिक विधाओं का मैथिली, संस्कृत और हिंदी में सृजन किया है। उनके अबतक प्रकाशित उपन्यास इस प्रकार हैं –

	उपन्यास	रचनाकाल
१]	रतिनाथ की चाची	१९४८

---

१. बाबूराम गुप्त – उपन्यासकार नागार्जुन – पृ. १६ – श्याम प्रकाशन, जयपुर – ३ – प्रथम संस्करण – १९८५.

२]	बलचनमा [१]	१९५२
३]	नयी पौध [२]	१९५३
४]	बाबा बटेसरनाथ	१९५४
५]	वरुण के बेटे	१९५७
६]	दुखमोचन	१९५७
७]	कुम्भीपाक	१९६०
८]	हीरक जयन्ती	१९६२
९]	उग्रतारा	१९६३
१०]	इमरतिया [३]	१९६८
११]	पारो [४]	१९७५

ये सभी उपन्यास आँचलिक साहित्य में अपना अलग स्थान रखते हैं।

"विद्यापति की कहानियाँ" यह उनका कहानी संग्रह है, तो "मर्यादा पुरुषोत्तम" उनकी जीवनी है। "अन्नहीनं-क्रियाहीनम्" और "बम भोलेनाथ" - दो निबंध संग्रह हैं। साथ ही अनुवादित साहित्य संपदा के रूपमें - "गीत-गोविंद", "विद्यापति के गीत", "मेघदूत" आदि ग्रंथ हैं। स्फुट गद्य के रूप में "आसमान में चँदा तैरे" और "एक व्यक्तियुग-निराला" - दो ग्रंथ हैं। उनका बाल साहित्य भी लोकप्रिय है - "प्रेमचंद",

---

१. "बलचनमा" उपन्यास नागार्जुन के मैथिली उपन्यास "बलचनमा" का हिंदी रूपांतर है।

२. "नयी पौध" उपन्यास उनके मैथिली उपन्यास "नवतुरिया" का हिंदी रूपांतर है।

३. "इमरतिया" यह उपन्यास १९६८ में "जमनिया का बाबा" नाम से प्रकाशित हुआ है।

४. "पारो" उपन्यास अनके मैथिली उपन्यास "पारो" का हिंदी रूपान्तर है।

"तीन अहदी", "सयानी कोयल", "रामकथा", "वीर विक्रम", आदि पुस्तकें हैं। "नागार्जुन - चुनी हुई रचनाएँ"[तीन खण्ड] यह संपादित ग्रंथ हैं।

कविता संग्रह भी उतने ही कोमल और संवेदनशील रूपमें उनके क्रांतिकारी भावों को अभिव्यक्तित देने में समर्थ रहे हैं - "युगधारा" [१९५३], "सतरंगे पंखोंवाली" - [१९५८], "प्यासी पथराई आँखे" [१९६३], "तलाब की मछलियाँ", "खिचडी विप्लव देखा हमने", "तुमने कहा था", "पुरानी जुमियों का कोरस", "हजार-हजार बाहोंवाली", "ऐसे भी हम क्या! ऐसे भी तुम क्या!, "रत्नगर्भा", "चित्रा" - [१९४२] आदि। "भस्मांकुर" यह उनका खण्डकाव्य है। तो संस्कृत में "धर्म लोक शतकम्", "पत्रहीन नग्न गाच्छ" आदि रचनाएँ हैं।

संपादक के रूप में भी नागार्जुन ने अपना स्थान बनाया है - "साहित्य सदन", "अबोहर" [पंजाब] मासिक पत्रिका का तथा "दीपक" का १९३५ ई. तक सफलता पूर्वक संपादन करते रहें। लाहौर [पाकीस्तान] से निकलनेवाली साप्ताहिक पत्रिका "विश्व बंधू" तथा हैद्राबाद [सिंध] से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका "कौमी आवाज" का भी १९४२-४३ में संपादन किया है।

नागार्जुन के जीवनवृतान्त पर दृष्टि डालने के पश्चात हम यह कह सकते हैं कि, उन्होंने जीवन को जिस रूप में देखा, जाना और समझा है, उससे उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का सृजन हुआ है। जीवन की अनुभूति के अनुसार उन्होंने लेखन कार्य किया है। प्रेमचंद के बाद हिंदी साहित्य में उसी व्यक्तित्व के धनी उपन्यासकार नागार्जुन ही है। उनके व्यक्तित्व में सरलता और दृढता का अद्‌भूत समन्वय है। वे हिंदी साहित्य में दलित वर्ग के प्रति संवेदनशील है। मजदूर, किसान, दलित तथा पीडित जनता के दुःखों को उन्होंने आवाज दी है। वे उदार और फक्कड मानव, रुढियों और परंपराओं के विरोधक, बहुश्रुत, बहुभाषी, ज्ञानी, प्रगतिशील विचारक, श्रेष्ठ अनुवादक तथा संपादक हैं। वस्तुत: नागार्जुन का ज्ञान पांडित्यपूर्ण न होकर जीवन के अनुभवों पर आधारित रहा है।

—*—

अध्याय - दूसरा

नागार्जुन की युगीन परिस्थितियाँ ।

कोई भी साहित्यिक कृति युगीन परिस्थितियों की उपज होती है। साहित्यकार भी प्रत्यक्ष - अप्रत्यक्ष रूपसे अपनी युगीन परिस्थितियों से चेतना पाकर ही साहित्य का सृजन करता है। साहित्यके अंतर्गत, जीवन और उसके परिवेश को सशक्त अभिव्यक्ति देने में उपन्यास विधा ही श्रेष्ठ मानी जाती है। इसी कारण साहित्य में युग की संपूर्ण परिस्थितियाँ और समस्याएँ मुखरित हो जाती हैं।

नागार्जुन एक श्रेष्ठ आँचलिक उपन्यासकार हैं। वे अपने युग की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से अत्यंत प्रभावित रहे हैं। स्वयं बिहार अँचल के सुपुत्र होने से वहाँ के पिछडेपन और जनजीवन को अनुभव कर चुके हैं। जिससे उन्होंने अँचल के जनजीवन की आशा-आकांक्षाओं, वेदनाओं और संघर्षपूर्ण स्थितियों को अपने उपन्यासों में अत्यंत संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है। इसलिए नागार्जुन की युगीन परिस्थितियों को देखना अनिवार्य है।

अ] राजनीतिक परिस्थिति -

नागार्जुन साहित्य जगत में प्रविष्ट होने के समय तक भारत का इतिहास नव जागरण के प्रबल आव्हान का इतिहास था। अंग्रेजों के शिंकजों मे जकडे भारत को स्वाधीन बनाने के लिए म.गांधीजी के नेतृत्व में अहिंसावादी आंदोलन प्रभावी रूपसे चल रहा था। कॉंग्रेस के अंतर्गत गर्मवादी - नर्मवादी विचार धाराओं के होते हुए भी कॉंग्रेस जनता की आस्था और विश्वास का केंद्र बनी थी। इसी परिणाम स्वरूप भारतीयों में राष्ट्रीयताकी भावना बढती जा रही थी। म. गांधीजी के असहयोग आंदोलन और सविनय आज्ञा भंग आंदोलन में पूरे देश की जनता शरीक हो रही थी। कोई अपनी नौकरी छोडकर कोई अपनी रईसी-

छोडकर, कोई अपना स्कूल कॉलेज छोडकर, तो कोई अपनी धन संपत्ति छोडकर इन आंदोलनों में सक्रिय हो रहे थे। स्वदेशी भावना को बढावा देने के लिए विदेशी कपडों की होली जलाना, शराब की दूकानों को तोडना, अंग्रेज सत्ता के विरोध में जुलुस निकालना आदि कार्य बडे जोरों पर चल रहे थे। सन १९३० में म. गांधीजी ने नमक कानून तोडने का आंदोलन सफल बनाया। जिससे देश में अनेक जगहों पर नमक बनने लगा।

म.गांधीजी के प्रभाव से स्वयं नागार्जुन भी अत्यंत प्रभावित हो गये थे। इसका दर्शन हमें उनके "बलचनमा", "बाबा बटेसरनाथ", "नयी पौध", और "पारो" आदि उपन्यासों में मिलता है।

"बलचनमा" का फूल बाबू, जो रईस जमींदार का शिक्षित पुत्र होते हुए भी नमक आंदोलन में सक्रिय हिस्सा लेता है, जेल जाता है। गांधीवादी पध्दति से घास-फूस की कुटिया बनाकर रहने लगता है।

"बाबा बटेसरनाथ" का दयानाथ भी अपनी पढाई छोडकर हाथमें तिरंगा लेता है। और पुलिस की साक्षी में नमक तैयार करना शुरु कर देता है। वह अत्यंत आत्मियता और अभिमान के साथ सभी गाँववालों से कहता है -

"भाईयों, इसे आप मामूली मिट्टी मत समझें। यह तो स्वाधीनता दिलानेवाली दवा है। इसके जर्रे-जर्रे से अंग्रेज-सरकार खौफ खाती है। इस नमक की एक चुटकी एक ओर और जालिमो का सौमन बारूद दूसरी ओर.. वह इसकी बराबरी नहीं कर सकता। यह नमक नहीं है, महात्माजी की प्रसादी है .. .. तावीज में डालनेका नमक है!" १

---

१. नागार्जुन - बाबा बटेसरनाथ - पृ.८८, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, चतुर्थ संस्करण - १९७८.

"नयी पौध " में चित्रित दिगंबर मल्लिक के पिता निलकण्ठ मल्लिक अपनी हाइस्कूल की मास्टरी छोडकर नमक आंदोलन में शरीक हो जाने कारण उसे जेल जाना पडता है।

"पारो" उपन्यास का नायक बीरजू का मंझला भाई देवीकान्त भी पण्डौल गाँव की पोखर के किनारे बाँस और मिट्टी की कुटिया बनाकर उसे "स्वराज्य आश्रम" कहते हुए रहता है और उसी स्थानपर गाँववालों की साक्षी में नमक तैयार करना शुरु कर देता है।

इसी समय एक ओर बढते हुए गांधीवादी प्रभाव से देश की जनता प्रभावित हो रही थी, तो दूसरी ओर काँग्रेसके अंतर्गत, युवा पीढी गांधीवादी अहिंसक विचारों से गर्मवादी विचारों की ओर आकर्षित हो रही थी। परिणाम स्वरूप सुभाषचंद्र बोस जैसे नव युवकों ने "आझाद हिंद फौज" को विदेशी सहायतासे निर्माण किया। तो कुछ नव युवक रुस क्रांति के परिणामों से आकर्षित हो गये। इस आकर्षण का कारण बिहार और बंगाल में प्रचलित जमींदारी प्रथा और उससे निर्मित पीडा एवं अत्याचार ही था। यह पीढी मार्क्सवादी सिध्दान्तों के आधार पर विदेशी साम्राज्यवाद और देशी पूँजीपतियों के विरुध्द लडाई करते हुए आर्थिक समता और वर्ग विहिन समाज निर्माण करना चाहती थी। इस "साम्यवादी" विचारधारा के प्रभाव से काँग्रेस के अंतर्गत युवा पीढी को काँग्रेस में ही रोकने के लिए और जनमानस पर काँग्रेस के प्रभाव को अबाधित रखने के लिए सन १९३५-३६ में पंडित जवाहरलाल नेहरुने "समाजवादी काँग्रेस दल" को निर्माण किया। इस दल के माध्यम से गांधीवादी रचनात्मक कार्यों को समाज विकास के लिए एवं आर्थिक उन्नती के लिए प्रारंभ किया।

इसी बीच अंग्रेज राज्यसत्ताने भारतीय प्रतिनिधियों को नाममात्र शासन में शामिल किया और "व्हिटो" का अधिकार गव्हर्नर को दे दिया।

कॉंग्रेस सरकार के कारोबार को देखने पर साम्यवादी दल यह मानने लगा कि कॉंग्रेस पूँजीपतियों के हाथ की कठपुतली है। क्यों कि उसका नेतृत्व पूँजीपतियों का वर्ग करता है। बिहार प्रांत में किसान और जमींदारों के संघर्ष में कॉंग्रेस मंत्रियोंने जमींदारों की ओर मुँह और किसानों की ओर पीठ की। जिससे सामान्य जनता में कॉंग्रेसी मंत्रीमंडल के प्रति असंतोष की भावना उभरने लगी। यही चित्र बंगाल में भी उभर आया। वहाँ सशस्त्र क्रांतिकी घटनाएँ घटने लगीं। परिणाम स्वरुप साम्यवादी विचारों से किसान - मजदूर वर्ग प्रभावित होने लगा। उनके आंदोलन भी शुरु हो गये।

कॉंग्रेस के अंतर्गत बदलती स्थिति और पूँजीपतियों के कॉंग्रेस पर बढ़ते हुए प्रभाव और उनकी अवसरवादी लीलाएँ देखते हुए, बिहार-बंगाल में किसानोंपर जमींदारों एवं पूँजिपतियों के बढते अत्याचार और अंग्रेज राज्यसत्ता व्दारा उनपर किये जानेवाले अमानुष जुल्म को देखते हुए स्वयं नागार्जुन का न्यायपूर्ण दृष्टिकोण कॉंग्रेस से विन्मुख होकर साम्यवादी विचारधारा से आकृष्ट होने लगा। जिससे मार्क्सवादी चिंतन एवं सिध्दान्त उनकी चेतना बनती गयी। परिणाम स्वरुप वे सन १९३७ से ३९ तक के काल में बिहार में चले किसान आंदोलनों में सक्रीय कार्य करते रहे।

इसीका चित्रण उनके "रतिनाथ की चाची", "बलचनमा", "बाबा बटेसरनाथ", "वरुण के बेटे" और "पारो" आदि उपन्यासों में मिलता है।

"रतिनाथ की चाची" उपन्यास में गोरखपुर और तरकुलवा गाँवोमें चले जमींदारोंके विरुध्द किसान आंदोलन पर अंग्रेज अधिकारियों के व्दारा दफा १४४ के आधार पर अन्याय करते हुए इस आंदोलन को दबाने के लिए किये प्रयासों का वर्णन मिलता है। तो कॉमरेड ताराचरण अपने साथियोंकी

मदद से मलेरिया पीडितों की सहाय्यता करते हुए दिखाया है। वाची गोरी स्वयं अनपढ होते हुए भी ताराचरण के कार्य को देखकर साम्यवाद की ओर आकर्षित हो जाती है। अपनी टूटी-फूटी आय में से कुछ पैसे मदद कार्य को देती है। व्दितीय विश्व युध्द में रुसी सेना की विजय संबंधी आशा व्यक्त करती है। इससे बिहार में बढते हुए साम्यवाद का प्रभाव ध्यान में आता है।

"बलचनमा" का फूलबाबू, जो जमींदार का शिक्षित गांधीवादी युवक है। वह बाद में बलचनमा व्दारा जमींदारों के विरुध्द चलाये आंदोलन को देखकर जमींदारों का समर्थन करता है। बलचनमा भी, जो फूलबाबू की प्रेरणा से कॉंग्रेसी बना था, वह जमींदारों के अत्याचारों की ज्यादत्ति के कारण कॉंग्रेस छोडकर राधेबाबू की प्रेरणा से कॉमरेड बनकर किसानों का आंदोलन शुरु कर देता है।

"बाबा बटेसरनाथ" का दयानाथ भी जो गांधीवादी युवक था। वह भी टुनाई पाठक जैसे जमींदारों के अत्याचार तथा भ्रष्टव्यवहार और उनके रिश्तेदार, जो सरकारी अधिकारी थे उनसे पीडित हो जाता है। बाद में बाबू श्याम सुंदरसिंह की सहायता से "जनवादी नवजवान संघ" और "किसान सभा" की स्थापना करते हुए अन्याय के विरुध्द लडता है।

"वरुण के बेटे" का साम्यवादी नेता मोहन माँझी गढपोखर के अधिकार के लिए मलाही-गोंढियारी मछुओं का संघ बनाकर अपने साथियों के साथ जमींदारों के अत्याचारों और नौकरशाही के विरुध्द आंदोलन शुरु कर देता है। इस आंदोलन में मधुरी जैसी अनपढ लडकी भी साम्यवादी विचारों से प्रेरित होकर अन्य स्त्रियों में जागृती करती हुई, सक्रिय कार्य करती है। जेल जाती है। नारे लगाती है -

"इन्किलाब जिंदाबाद! मछुआ संघ जिन्दाबाद .. .. हक की लड़ाई .. जीतेंगे! .. गढ पोखर हमारा है .." १

"पारो" उपन्यास का देवीकान्त भी जो पहले गाँधीवादी था परंतु काँग्रेसी मंत्रियों की लीलाएँ देखकर बादमें कॉमरेड बनकर जमींदारों के विरुध्द किसान सभा का कार्य करने लगता है। जिससे उसे "लालभैय्या" कहा जाता है।

"रतिनाथ की चाची" का ताराचरण, "बलचनमा" का बालचन, "बाबा बटेसरनाथ" का दयानाथ, "वरुण के बेटे" का मोहन माँझी, "पारो" का देवीकान्त, "नयी पौध" का दिगंबर मल्लिक आदि सभी पात्र नागार्जुन की साम्यवादी निष्ठा और क्रियाकलापों का प्रतीक मात्र मानकर चित्रित किये गये हैं। जो किसानों की भलाई के लिए, न्याय के लिए साम्यवादी विचारों से सक्रिय आंदोलन करते हैं। बाढ, भूकम्प, अकाल, अग्निकांड तथा मलेरिया आदि संकटों से पीडित लोगों के लिए मदद कार्य चलाते हैं।

सन १९४२ के "भारत छोडो" आंदोलन के गहरे प्रभाव के परिणाम स्वरूप और सन १९४५ में व्दितीय महायुध्द में हुयी अंग्रेजों की पराजय के परिणाम स्वरूप अंग्रेज सरकारने अपनी तोड़-फोड़ नीति का परिणाम दिखाते हुए, भारत और पाकिस्तान निर्माण करते हुए, भारत को १५ अगस्त १९४७ कें दिन स्वाधीनता प्रदान की।

स्वातंत्र्योत्तर काल में पं. जवाहरलाल नेहरूजीने अपनी समाजवादी विचारधारा के अनुसार पंच वर्षीय योजना का प्रचलन कृषि-औद्योगिक विकास के हेतु शुरु किया। परंतु सन १९६२ के चीनी आक्रमण तथा सन १९६५ और

---

१. नागार्जुन - वरुण के बेटे - पृ. ११८ - वाणी प्रकाशन, दिल्ली-२
प्रथम संस्करण - १९८४

सन १९६७ के पाकिस्तानी आक्रमणों के कारण विकास योजनाएँ अधूरी रहने लगी। तो दूसरी और देश में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, तस्करी तथा नौकरशाही बढने लगी। इस स्थिति को देखकर नागार्जुन बहुत चिन्तित बनते गये। इस स्थितिका चित्रण उनके "उग्रतारा" उपन्यास में मिलता है।

"देश की दौलत को नुकसान पहुँचानेवाला हमारा वैसा ही दुश्मन है जैसा कि हमारी सीमाओं के अन्दर घुस-पेट करनेवाला। हम न उसको छोडेंगे, न इसको छोडेंगे।" १

इससे नागार्जुन की साम्यवादी विचारधारा कितनी गहरी है, यही महसूस होता है। इसी कारण उनकी दृष्टि अधिक पैनी होती गयी है। आत्महितरत और अवसरवादी लोगों के कारण ही नेतागिरी सस्ती हो गई। भाई- भतीजावाद, बेईमानी, दलबदलीपन कैसा बढता जा रहा है, इसका वर्णन नागार्जुन ने "कुम्भीपाक" के दिवाकर और मिनिस्टर जानकी बाबू के माध्यम से किया है। राजनीति पर व्यंग्य किया है -

"सफेद पोश डाकू .. कसाई कहीं का! किस सफाई से गरिबों का गला काटता है! .. अरे, इन्ही कोठियों के अन्दर तो अन्याय पनाह लेता है आकर! सरकार अभी इन्ही कोठियों और बंगलों में कैद है, उसे तुम तक पहुँचने में दस-बीस वर्ष लग जाएँगे अभी!" २

इसके साथ ही उन्होंने अपने साम्यवादी विचारों से परिवर्तन और सुधार का समाधान भी "नयी पौध" के दिगंबर मल्लिक और उसके बम पार्टी

---

१. नागार्जुन - "उग्रतारा" - पृ.७१ - राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-२
प्रथम संस्करण - १९८७.

२. नागार्जुन -"कुम्भीपाक"- पृ.३६-वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - ३,
प्रथम संस्करण - १९८५.

के साथी, "वरुण के बेटे" के मोहन माँझी और उसके मछुआ संघ तथा किसान सभा के साथी, "दुखमोचन" के दुखमोचन और उसके साथी आदि के व्दारा युवा पीढी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जो स्वातंत्र्योत्तर भारत को विकसित और संगठित करने के कार्य की दृष्टि से उपादेय चित्रण है।

काँग्रेस के सिंडीकेट - इंडिकेट विभाजन के बाद भी सिंडीकेट में रहे हुए काँग्रेसी - समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण, आचार्य कृपलानी इनके साथ नागार्जुन कार्य करते रहे। सन १९७५-७७ में तत्कालीन महामंत्री श्रीमती इंदिरा गांधीजी ने नौकरशाही, रिश्वतखोरी, तस्करी, मुनाफाखोरी एवं राजनीतिक संतुलन के लिए देशमें राजनीतिक आपात् कालीन स्थिति घोषित की। इस काल में नागार्जुन भी चंद्रशेखर एवं जयप्रकाश नारायण आदि नेताओं के साथ नुक्कड सभाओं में प्रचलित काँग्रेस सत्तापर तीखे भाषण देने लगे। जिससे वे भी समाजवादी नेताओं के साथ कैद हो गये थे।

इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय और अंतर-राष्ट्रीय महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना-ओंका नागार्जुन पर काफी प्रभाव रहा है।

ब) <u>सामाजिक परिस्थिति -</u>

प्रत्येक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना व्यापक सामाजिक प्रतिक्रीया को जन्म देती है। ईसाई मिशनरियों के सामाजिक विचारों के प्रचार के बावजूद भी भारतीय समाज अज्ञान, अंधश्रध्दा, रुढी - परंपरा, जाती - व्यवस्था, आर्थिक विपन्नता तथा कुरीतियों से युक्त विसंगतियों से ग्रस्त रहा था।

अंग्रेज - सत्ता के कारण निर्माण शिक्षा व्यवस्था और यातायात के साधनों से एक नया सामाजिक दृष्टिकोण विकसित होने में सहायता मिली। जिससे अंग्रेजी शिक्षा से विभूषित भारतीय नवयुवकोंने समाज सुधार का कार्य शुरु किया। राजा राममोहन रायने सती प्रथा बंद की, तो

आगरकर, गोखले, फुले आदिने नारी शिक्षा का प्रचलन प्रारंभ किया। महर्षि कर्वे तथा ईश्वर चंद्र विद्यासागर आदि समाज सुधारकोंने विधवा विवाह का प्रचलन प्रारंभ किया। इन समाज सुधारकोंने भारत सेवक संघ, आर्य समाज, ब्रह्मो समाज, प्रार्थना समाज, सत्यशोधक समाज आदि संस्थाओं के द्वारा समाज में फैली कुरीतियाँ, अंधश्रध्दा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, जरठ विवाह आदि अनिष्ट प्रथाओं के परिवर्तन के लिए आंदोलन चलाये।

म. गांधीजीके नेतृत्व में देश के राजनीतिक स्थिति के साथ सामाजिक जीवन में भी नया मोड निर्माण हुआ। उन्होंने समाज विकास के लिए रचनात्मक कार्य भी प्रारंभ किया। अछूतोध्दार, ग्राम सेवा, पीडितों की सेवा, ग्राम संगठन, एवं किसान - मजदूर वर्ग के आर्थिक उन्नयन के साथ जमींदारी उन्मूलन का भी कार्य किया।

औद्योगिकरण और वैज्ञानिक शिक्षा जन्य व्यक्तिवादी प्रवृति आदि युग की नवीन मान्यताओं के कारण नव युवक अपने देहात और संयुक्त परिवार छोडकर शहरों में जीविका के लिए जाने लगे। इस परिवार विघटन का सबसे अधिक परिणाम नारी जीवनपर हुआ। आर्थिक संघर्ष के कारण नारी शिक्षा समय की माँग बनती गयी। शीघ्रता से बदलते हुए सामाजिक परिवेश में नारी की भूमिका में आमूलाग्र परिवर्तन होता रहा।

इस बदलते सामाजिक परिवेशने नागार्जुन को और अधिक सजग बनाया। वैसे तो बिहार अँचल आज भी पीछडा हुआ दिखाई देता है। इस अँचल में प्रचलित कुरीतियाँ, विवाह विषयक प्रथाएँ और शिक्षा संबंधी असुविधाएँ मौजूद है। वहाँ जरठ विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह प्रचलित होने के कारण विधवा विवाह तथा अंतरजातीय विवाह जैसी समस्याएँ दहेज प्रथा और वेश्यावृति को बढावा देती रही है। अर्थात् बिहार के अँचल में स्थित सामाजिक रुढियाँ, रीतिरीवाजों, कुप्रथाओं,

अज्ञान, छुआछूत की समस्या, नारी संबंधी विषादभरी समस्याओं को स्वयं नागार्जुन ने अनुभव किया है। इन समस्याओं का चित्रण उन्होंने अपने उपन्यासों में बडी संवेदनशीलता के साथ किया है। साथ ही उन्होंने अपने साम्यवादी एवं सुधारवादी दृष्टिकोण से कुछ रचनात्मक समाधान भी प्रस्तुत किया है। इस दृष्टिकोण का वहन करनेवाला साम्यवादी तथा समाजवादी पात्र उनके प्रत्येक उपन्यास में दिखाई देता है।

"रतिनाथ की चाची" में चित्रित विधवा गौरी जो अनमेल विवाह की शिकार तो होती है। परंतु वैधव्य और सुंदरता के कारण देवर जयनाथ के व्दारा फुसलाने पर गर्भवती बनकर कलंकित एवं प्रताडित हो जाती है। पुत्र उमानाथ भी उसका तिरस्कार करता है। जिससे वह दुःखमय और कष्टमय जीवन जीती है। निर्वाह के लिए चर्खा चलाती है। ताराचरण के प्रभाव से साम्यवादी चेतना पाती है। इस उपन्यास में जयनाथ के माध्यम से स्वच्छंदी वृतिपर और भोला पंडित जैसे अनमेल विवाह के बिचौलों पर समाज जीवन विकृत करनेवाले कंटक मानकर तीखा व्यंग्य भी किया है। इस में कुल्ली राउत के माध्यमसे जाती भेद की समस्या को भी अभिव्यक्त किया है।

"बलचनमा" का बचलनमा स्वंय और उसकी विधवा दादी, विधवा माता तथा क्वाँरी बहन सभी जमींदार के अत्याचारों की शिकार बने है। जमींदारों की जबरदस्ती लगान वसूली तथा फूलबाबू जैसे अवसरवादी गाँधीवादी काँग्रेसी को देखकर बचलनमा कॉमरेड राधेबाबू से प्रभावित हो जाता है। पीडित - शोषित किसान - मजदूरों का संगठन बनाकर जमींदारों के विरुध्द संघर्ष करता है।

"नयी पौध" का दिगंबर मल्लिक अपने बम पार्टी के सदस्यों की सहाय्यता से सौरठ मेले में घटक और पंजीकारों की भ्रष्टता से निर्माण होनेवाले अनमेल विवाह को रोकता है। अनमेल विवाह के सिध्द साधक

खोंखा पंडित अपनी छः लडकियों का विक्रय कर देने के बाद भी नातिन बिसेसरी को साठ वर्षीय चतुराननन चौधरी से ब्याहना चाहता है। इस सनातन प्रवृति का तथा कुरीति का प्रगतिशील नव-युवकों ने कडा विरोध किया है। उस बिसेसरी का विवाह नवयुवक वाचस्पति के साथ कर देते हैं। नागार्जुन ने इस उदाहरणसे बिहार मिथिला अँचल में प्रचलित अनमेल विवाह, जरठ विवाह, नारी विक्रय आदि समस्याओं पर नयी पीढी के द्वारा विप्लवी समाधान प्रस्तुत किया है।

"बाबा बटेसरनाथ" के जीवनाथ और दयानाथ जो गांधीवाद से प्रभावित कॉग्रेस युवक थे। उन्होंने ग्रामीण अंध-विश्वास, मनौतियाँ, पशुबलि, भूतप्रेत विश्वास, आपसी ईर्ष्या तथा जमींदारों की ज्यादति, सरकारी अधिकारीयों की रिश्वतखोरी और नेताओं की अवसरवादीता एवं आत्महितरत वृति में परिवर्तन लाने के लिए, वे दोनों साम्यवादी बाबू श्यामसुंदर सिंह की सहायता से नव जवान संघ तथा किसान सभा निर्माण करते हुए कार्य करते है।

"वरुण के बेटे" का मोहन माँझी भी साम्यवादी विचार से मलाही गोंढियारी मछुआर का संघटन बनाकर जमींदारी प्रथा के विरुध्द अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करता है। शोषण, अत्याचार, भ्रष्टाचार, नौकरशाही और कानूनी असंगतियों से संघर्ष करता है। मधुरी स्वयं अशिक्षित होकर भी वैवाहिक जीवन के अत्याचारों के खिलाफ डटी रहती है। वैवाहिक जीवन का सौमनस्य स्वीकार करती है। साम्यवादी विचारों से प्रभावित होकर मछुआर संघ में सक्रिय कार्य करती है, जेल जाती है। यह पात्र नागार्जुन का नारी संबंधी होनेवाले सुधारवादी और स्वस्थ दृष्टिकोण का परिचायक है।

"दुखमोचन" का दुखमोचन नागार्जुन जी के समाजवादी और समतावादी दृष्टिकोण का प्रतीक है। वह ग्राम सुधारक एवं नये युग का संवाहक है। वह अंधरूढियों तथा पुराने संस्कारों से ग्रस्त समाज के साथ संघर्ष करते हुए अंतरजातीय विधवा-विधुर विवाह को संपन्न बनाता है, अग्निकाण्ड पीडितोंकी सहायता करता है, ग्राम विकास के काम शुरु कर देता है, नारी शिक्षा के लिए पाठशाला शुरु करता है, अस्पृश्यता निवारण करता है, प्रायश्चित के नामपर किये जानेवाले पूजा-पाठ विधि का विरोध करता है। इस तरह सामाजिक स्थिति में सुधार लाने का समाधान नागार्जुन ने प्रस्तुत किया है।

"कुम्भीपाक" में वेश्या समस्याको उठाया है। साथ में नारी विक्रय का शिकार बनी, वैधव्य के कारण फुसलायी गयी चंपा, इंदिरा, कुंती, उर्मिला, मीना आदि वेश्याओं का पुनर्वसन तथा आर्थिक और शिक्षा विकास के लिए सुधारवादी एवं स्वस्थ दृष्टिकोण रखनेवाले रायसाहब नागार्जुन के समाजवादी एवं नारी विषयक स्वस्थ दृष्टिकोण रखनेवाले रायसाहब नागार्जुन के समाजवादी एवं नारी विषयक स्वस्थ दृष्टिकोण का परिचायक है। इसीलिए चंपा शिक्षा पाकर "शिल्प कुटीर" संस्था के माध्यम से नारी स्वतंत्रता, आर्थिक विकास और शिक्षा के लिए प्रयत्न करती है। तो प्रोफेसर सदानंद और अध्यापिका रंजना का अंतरजातीय विवाह के माध्यम से ऐसे विवाहोंका प्रचलन होने की अपेक्षा व्यक्त की है। इसके साथ ही अवसरवादी एवं आत्महितरत नेताओं पर भी टीका की है।

"उग्रतारा" की उगनी जो वैधव्य के कारण सामाजिक घुटन की शिकार बनती है। उसपर बलात्कार करते हुए भभिखन सिंह उसकेसाथ जबरदस्ती विवाह करता है। परन्तु जब उसका प्रेमी जेलसे छुटकर आ जाता है तब गर्भवती होते हुए भी कामेश्वरसे अंतरजातीय विवाह कर

लेती है। इस उपन्यास में अनैतिकता, भ्रष्टाचार का चित्रण किया गया है। साथही नारी शिक्षा का महत्व भी विशद किया है -

"तीसरी आँख होती है विद्या, समझी ?"[१]

यह विचार नागार्जुन जी के नारी विषयक प्रगतिशील दृष्टिकोण का परिचायक है।

"पारो" उपन्यास की पार्वती अनमेल विवाह का शिकार हो जाती है। वैवाहिक जीवन की मर्मान्तिक वेदनाओं एवं अत्याचारों को सहते हुए कहती है -

"हे भगवान! लाख दण्ड दे। मगर फिर औरत बनाकर इस देश में जन्म नहीं दे।"[२]

इस उपन्यास में अनमेल विवाह तथा बहुविवाह प्रथा के दुष्परिणामों को विशद करते हुए नारी शिक्षा एवं नारी स्वतंत्रता संबंधी विचार स्पष्ट किये हैं।

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में प्रचलित अनमेल विवाह, बहुविवाह, जरठ विवाहों को विशद करते हुए उससे निर्मित विधवा विवाह एवं अंतरजातीय विवाह की समस्याओं पर सृजनशील समाधान प्रस्तुत किया है। साथही सामाजिक जीवन से संबंधित रीतिरीवाज, कुल और धन के घमण्ड, उससे निर्मित अत्याचार, नारी जीवन की विषाद भरी समस्याएँ उद्घाटित करते हुए सुधारवादी प्रयास भी किया है। जातिगत समता नारी शिक्षा, उसकी आर्थिक स्वाधीनता आदि का

---

१. नागार्जुन - उग्रतारा - पृ.४८ - राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नयी दिल्ली - २ - प्र.सं. १९८७.

२. नागार्जुन - पारो - पृ.३७, यात्री प्रकाशन, दिल्ली-९४ सं. १९८७.

भी पथ प्रदर्शन मिलता है। इस तरह का चित्रण उनके प्रगतिशील नवीन विचार और समाजवादी मान्यताओं का फल है। वैसे तो सामाजिक संवेदना ही नागार्जुन के उपन्यासों के प्राण बन गयी है।

क] धार्मिक परिस्थिति -

जब हम धर्म के सामाजिक जीवन पर होनेवाले प्रभाव के बारे में सोचते हैं तब धर्म और नैतिकता में कोई विशेष अंतर महसूस नहीं होगा। वैसे तो धर्म के दोन पहलू माने जाते हैं - पहला है सार्वभौमिक और दूसरा है सामाजिक। सार्वभौमिक पहलू में नैतिक कर्तव्यों संबंधी का क्षेत्र पूरे विश्व में व्याप्त हो सकता है। उसके लिए देश काल की सीमा नहीं रहती। धर्म का सामाजिक पहलू व्यक्ति के सामाजिक जीवन संबंधी नियमों और कर्तव्यों का विचार करता है, इसमें वर्ण-धर्म, कुल-धर्म, राज-धर्म, स्व-धर्म आदि संबंधी विशेष विचार किया जाता है।

स्वातंत्र्यपूर्व काल में इसी धर्म का विकृत रूप भारत के प्रत्येक देहात में दिखाई देता था। प्रत्येक जाति-वर्ण का अपना इष्ट देव और उससे सामाजिक नियमों और कर्तव्यों का अलग अलग रूप दिखाई देता था। हिंदु धर्म में पुरोहित तथा पण्डा लोगोंने जन सामान्य की अंधश्रध्दा से लाभ उठाकर अपनी इच्छा के अनुसार सामाजिक मान्यताओं तथा धार्मिक नियंत्रण का प्रचलन किया था। जिससे वे अपने आपको ईश्वर का प्रतिनिधि मानकर भाग्यवाद का प्रचार करते हुए सामान्य जनों का अविरत शोषण कर रहे थे। ऐसे धर्म मार्तंड पूँजीपतियों के साथ अपनी निष्ठा रखते थे। उनके पक्ष में

धर्मशास्त्र के आधार को प्रस्तुत करते हुए अपना उल्लू सीधा करते थे। जिससे धार्मिक अंधविश्वास, प्रायश्चित के विधि, मनौतियाँ, पशुबलि आदि प्रथाएँ प्रचलित हो गयी थी। इस कालमें समाज सुधारकों ने ऐसी परंपराओं को नष्ट करने का प्रयास जरुर किया था। परंतु समाज में वैज्ञानिक दृष्टि का अभाव था। इतना ही नहीं इस काल में प्राकृतिक प्रकोप जैसे-अकाल, भूकम्प, बाढ,अतिवृष्टि तथा बीमारी फैलाव को भी भगवान का प्रकोप माना जाता था। इस से मुक्त होने के लिए धार्मिक विधिको आवश्यक माना जाता था।

परंतु परवर्ती कालमें औद्योगिक क्रांति, रुसी क्रांति, तथा दो महायुध्दों आदि सभी के परिणाम स्वरुप बढते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रभाव के कारण जन सामान्य में धर्म संबंधी परिवर्तनशील दृष्टि निर्माण होती गयी।

नागार्जुन वैसे तो सजग और साम्यवादी साहित्यकार है और साथ ही मिथिला अँचल में जन-जीवन के अनुभव को भी ले चुके हैं। जिससे उनपर भी ऐसी प्रस्थापित धर्म व्यवस्था का प्रभाव गहराई से पड गया था। इसी कारण उन्होंने प्रचलित रीतिरीवाजों, सनातन परम्पराओं, रुढियों, जात-पाँत भेद तथा धार्मिक अंधविश्वासों, और आडम्बरों के विरुध्द वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखते हुए लेखन किया है। नागार्जुन ने मिथिला अँचल के ग्राम जीवन में धर्म के दोनों रुपों को अनुभव किया है। पुरानी पीढी को सनातन मान्यताओं के समर्थक के रुप में देखा है। तो नयी पीढी को ऐसी मान्यताओं के समर्थक के रुप में देखा है। तो नयी पीढी को ऐसी मान्यताओं से संघर्ष करते हुए अनुभव किया है। उनके सुधारवादी तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का सबल चित्रण नागार्जुन जी ने अपने उपन्यासों में किया है।

"रतिनाथ की चाची" में धार्मिक आडंबरों और बाह्याचारों पर कुल्ली राउत व्दारा व्यंग्य कसते हुए दिखाया है। रतिनाथ का तालाब के किनारे जाते - जाते संध्या करना आडम्बर प्रियता का द्योतक है। जिससे कुल्ली राउत यही अनुभव करता है कि, उच्च ब्राह्मण जाति धर्म की आड में स्वार्थ सिध्द करने का प्रयास करती है। विधवा चाची गौरी का अवांछित गर्भ गिराने के लिए साधुतारा बाबा भगवती त्रिपुर सुंदरी को पंचाक्षर मंत्र मानकर जयनाथ को समझाता है। यह भी धार्मिक आडम्बर ही है। इसपर भी गर्भपात के बाद प्रायश्चित के लिए पूजा-पाठ, दान-धर्म, भोजन खिलाकर कलंक दूर करने की परंपरा, धर्म के नामपर सामाजिक बहिष्कार आदि बातें धर्म के अध:पतन को ही सिध्द करती है। इसका नागार्जुन ने खुलकर वर्णन करते हुए, धर्म के विकृत रूपपर व्यंग्य किया है।

"बलचनमा" में चित्रित बालपन अनुभवों और आँखों देखी घटनाओं से समझ लेता है कि न्याय और कानून ईश्वर प्रदत्त नहीं बल्कि मानवकृत होते हैं। अमीर और गरीब वर्ग ईश्वर ने नहीं बल्कि शोषक वर्गने बनाया है। यह वैज्ञानिक पैनी दृष्टि वह राधेबाबू से प्राप्त करता है। उँची जातवालों के एक पारंपारिक अंधविश्वास पर नागार्जुन ने कसकर व्यंग्य किया है। मालकिन की ननद ने बलनमा की पढाई पर कहा था कि, नौकर-चाकर जितना भी ना समझ रहे उतना ही अच्छा है। उसका कहना था कि, छोटी जातवालों को जो एक आखर भी ज्ञान देता है उसका अपना तेज घटता है, औरजो कोई शुद्र को समूची पोथी पढा दे उसके पितर स्वर्ग छोडकर नरक में रहने के लिए मजबूर होते हैं। नागार्जुन ने जनजीवन का विस्तार के साथ चित्रण करते हुए, उनके रीति-रीवाज, लोक विश्वासों, अंधविश्वासों, परम्पराओं आदि का सजीव चित्रण किया है।

"बाबा बटेसरनाथ" में मानव रूप धारी वट वृक्ष बाबा बटेसरनाथ व्दारा ग्रामांचल के अंधविश्वास, पशुबलि, मानव बलि, भूत-प्रेतमें विश्वास, प्रचलित कुप्रथाओं को अनावश्यक सिध्द करते हुए, धार्मिक पाखण्डता को स्पष्ट किया है। स्वयं मनुष्यने ही अपने स्वार्थ के लिए देवदेवताओं की हिंसक इच्छाओं को पोथियों में बंद किया है। इस विचार को स्वयं नागार्जुन ने धर्मांधता नष्ट करने के लिए स्पष्ट किया है।

"दुखमोचन" के नित्याबाबू सनातन वादी पीढीके समर्थक रहे हैं। उनके मतानुसार विधवा माया और विधुर कपील का विवाह धर्म संकट और घोर कलियुग है। इतना ही अग्निकांड में मा. टेकनाथ का बैल झुलसकर मरता है, इस पापक्षालनके लिए सत्यनारायण की पूजा, दान धर्म करने की सलाह देते हैं। इस प्रायश्चित वाले अंधविश्वास पूर्ण कार्य से टेकनाथ को परावृत करने का प्रयास दुखमोचन करता है। इससे स्वयं नागार्जुन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्पष्ट होता है। जो धार्मिक अंधश्रध्दाओं को तथा मान्यताओं को परिवर्तीत करने के लिए आवश्यक है।

"कुम्भीपाक" की कम्पाउडर की बीवी सन्तान हीन है इसलिए पास पडोस की औरतोंने साधु से मंत्र की भभूत लेने की जब सूचना दी। उसपर वह अपनी वैज्ञानिक दृष्टि का परिचय देते हुए, धर्माडम्बर और व्याभिचारपर व्यंग्य करती है -

"ऐसी जगहों में कौन से मंत्र पढे जाते हैं और कैसी भभूत चटाई जाती है, यह मुझे मालूम है. .. सन्तान के लिए यही सब करना होगा तो मैं टेढे-मेढे रास्तोंपर नहीं चलूँगी, सीधी सडक पकडूँगी। आप मेरा मतलब समझ गई होंगी। "[१]

---

१. नागार्जुन - कुम्भीपाक - पृ.११९ - वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-२ प्रथम संस्करण - १९८७.

वह ऐसे भ्रष्ट व्यवहार के बदले निःसन्तान रहना पसंद करती है। यह विचार नागार्जुन की प्रगतिशील दृष्टि का ही परिचायक है।

"पारो" उपन्यास का बुल्हाई चौधरी पार्वती से अमानुष और पाशवी बर्ताव करता है। यह बात जब बीरजू भैय्या को मालूम होती है, तबसे वह ईश्वर और प्राकृतिक सत्य में विश्वास नहीं रखना चाहता। यहाँ नागार्जुन ने धर्म में अपेक्षित दाम्पत्य जीवन के सौमनस्य का विकृत रूप देखकर ही, उसे तोडनेके लिए प्रगतिशील विज्ञान निष्ठ दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है।

नागार्जुन ने मिथिलांचल में प्रचलित धार्मिक अंधविश्वास, मान्यताओं, कुप्रथाओं और साधु लोगों के आडम्बरों एवं विकृत व्यवहारों को वास्तव रूपमें चित्रित करते हुए, इसमें परिवर्तन लाने के लिए कुछ विज्ञान निष्ठ एवं साम्यवादी दृष्टि से समाधान भी प्रस्तुत किये हैं। जो धर्म पाखण्डता, सामान्य जनों का मानसिक और आर्थिक शोषण करती है, वह समाज जीवन के लिए क्षयरोग के समान ही है। इससे समाज को स्वस्थ और सुरक्षित रखने के लिए धार्मिक एवं सामाजिक कुरीतियों को समूल नष्ट करना अत्यावश्यक है।

ड) आर्थिक परिस्थिति -

किसी भी राष्ट्र की सामाजिक और राजनीतिक संपन्नता वहाँ की आर्थिक स्थिति पर अवलंबित होती है। क्यों कि आर्थिक स्थिति ही मनुष्य के भौतिक और सामाजिक परिवेश को सिध्द करती है। इस दृष्टि से नागार्जुन की युगीन आर्थिक स्थिति को देखना भी अनिवार्य है।

सन १६०० ई. में अंग्रेजोंने ईस्ट इंडिया कंपनी के रूपमें हमारे देश में व्यापार के हेतु आगमन किया। परंतु सन १७५७ से १७६४ ई. इस काल में उन्होंने जब भारतीय राजनीतिक सत्ता हासिल की तब उन्होंने अपने स्वार्थ को ध्यान में लेकर अनुकूल कानूनों को बनाया। औद्योगिक विकास के नामपर यातायात के साधन बढाकर अपनी कारखानदारी को विकसित करना शुरु किया। इसी के परिणाम स्वरूप भारतीय घरेलु और पारंपारिक उद्योग - धंधों का विनाश होता गया। अंग्रेजों के आगमन पूर्व भारत का देहात स्वावलंबी और स्वंयपूर्ण था। जुलाहा, कुम्हार, सुनार, बढई, लुहार, चमार, धोबी, नाई, तेली आदि सभी कारिगर अपने पारंपारिक कुटिरोद्योगों में संतोष के साथ काम कर रहे थे। परंतु अंग्रेजों की आर्थिक शोषण नीतिने इन कारिगरों को उखाड फेंक दिया। जिससे देहातों की आत्मनिर्भर आर्थिक ईकाई नष्ट होती गई।

अंग्रेजों की राजनीतिक तथा आर्थिक कुटनीति और औद्योगिक विकास के नामपर चली शोषण नीति के कारण भारतीय किसानों की आर्थिक स्थिति इतनी दयनीय बनती गयी कि उन्हें निर्वाह के लिए महाजनों की शरण लेनी पडी। इसका परिणाम यह हुआ कि महाजनों की सूदखोरी के कारण उनकी जमींन महाजनों की हो गई और ये महाजन जमींदार बन गये। किसान मजदूर बनकर ऐसे जमींदारों की जमीन पर श्रम करते रहे। जमींदार कृषि-व्यवसाय को व्यापार समझकर किसानोंसे जबरदस्ती लगान वसुल करते रहे। दूसरी ओर अंग्रेजों व्दारा कर का बोझ बढता गया। ऐसे तीन रूपों में किसानों का शोषण होता गया। जिससे उसका कर्ज में जन्म लेना, उसी में ही जीनाओर कर्ज में ही मरना सिध्द

हो गया। शोषकों के व्दारा किसानों पर अत्याचार एवं अन्याय बढता रहा। भारतीय राजनीतिक नेताओं ने भी इस स्थिति की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। जिससे किसानों की आय कम और देनेदारी अधिक बढती गयी।

प्रथम और व्दितीय महायुध्द के कारण आर्थिक विपन्नावस्था और तेज हो गयी। दिशाहीन और आर्थिक विपन्नता से पीडित किसान कल-कारखानों में मजदूरी करने के लिए शहरों की ओर जाने लगा। जिससे देहात के संयुक्त परिवारों का विघटन होने लगा, कृषक व्यवसाय भी क्षीण होने लगा। परिवार विघटन से नारी वर्ग अपनी स्वाधीनता और अर्थार्जन के लिए जागृत होने लगा।

म.गांधीजीने भी किसान - मजदूर - कारिगर इनकी आर्थिक विपन्नावस्था और शोषण को रोकने के लिए एवं आर्थिक विकास के लिए, कुटिरोओगोंको बढावा देने के लिए, चर्खा चलाना तथा स्वदेशी वस्तुओं का निर्माण करते हुए उसीका इस्तेमाल करना और विदेशी वस्तुओं का त्याग करना आदि कार्य प्रारंभ किया। तो दूसरी ओर साम्यवादी दलने राज्यसत्ता, महाजन, जमींदार इनके व्दारा किसानों का होनेवाला आर्थिक शोषण और उससे निर्मित अत्याचारों को देखकर किसान - मजदूरों का संगठन बनाकर विदेशी साम्राज्यवाद और देशी पूँजीपतियों एवं जमींदारों के विरुध्द आंदोलन प्रारंभ किया।

इस स्थिति को ध्यान में रखकर ही स्वातंत्र्योत्तर काल में पं.जवाहरलाल नेहरु ने अपनी समाजवादी आस्था के साथ पंचवर्षीय योजनाओं का आयोजन शुरु किया। जिससे कृषि-औद्योगिक विकास का

कार्य शुरु हुआ। साथ में जमींदारी उन्मूलन, किसान-मजदूरों से बेगार लेनेपर रोक लगाना, श्रममूल्य निर्धारण करना, कुटिरोद्योगों को प्रोत्साहन देना आदि कार्य भी प्रचलित हुए। परंतु इसका नतीजा उल्टा ही होता गया। पूँजीपतियों की रक्षा होती गयी। देश में काला धन बढने लगा। इससे जन साधारण में क्षोभ तथा आक्रोश स्पष्ट होने लगा। इसी कारण समाज में आर्थिक आधार पर उच्च-वर्ग, मध्य-वर्ग, निम्न-मध्यवर्ग, निम्न वर्ग प्रस्थापित हो गये।

स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर कालीन आर्थिक विपन्नता और निरंतर शोषण आदि ने नागार्जुन को एक संविदनशील उपन्यासकार और साम्यवादी कॉमरेड के रूप ने आकर्षित किया। जिससे वे बिहार में चले किसान आंदोलनों में कार्य करते रहे। जेल यात्रा करते रहे। इस आर्थिक स्थिति और शोषण को नष्ट करने के लिए उन्होंने अपने उपन्यासों में साम्यवादी पात्रों के व्दारा किसान सभा, नवजवान संघ निर्माण करते हुए, जमींदारी प्रथा, उससे निर्मित अत्याचार, भ्रष्टाचार, नौकरशाही, तथा कानूनी विसंगतियों के विरुध्द संघर्ष करते हुए दिखाया है। इस संघर्ष को अनिवार्य मानकर साम्यवादी समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

"रतिनाथ की चाची" की विधवा चाची गौरी अपनी आर्थिक विपन्नावस्था मिटाने के लिए और निर्वाह के लिए चर्खा चलाती है। उसका पुत्र उमानाथ अर्थार्जन के लिए कलकता जाता है। ताराचरण इस विपन्नता को मिटाने के लिए लोगों की आर्थिक मदद से गाँव में रास्ता बनाने का काम शुरु कर देता है। जिससे मजदूरों को काम मिलता है। वही ताराचरण जमींदारों के अत्याचार और आर्थिक शोषण के विरुध्द किसान आंदोलन चलाकर न्याय के लिए संघर्ष करता रहता है।

"बलचनमा" का बालचन राउत अपनी सात पीढ़ियों जैसा ही जमींदारों के अत्याचार, अन्याय का शिकार बन रहा था। उसने फूलबाबू जैसे जमींदारी प्रथा के समर्थक और अवसरवादी काँग्रेसी नेता का अनुभव लेकर कॉमरेड राधेबाबू की सहायता से शिक्षा पाकर कॉमरेड बनकर किसान-मजदूरों का संगठन बनाकर संघर्ष करता रहता है। यही बालचनमा पहले चर्खा चलाकर निर्वाह करता था।

"बाबा बटेसरनाथ" का दयानाथ और जयनाथ जो पहले गांधीवादी काँग्रेस युवक थे। परंतु काँग्रेसी सस्ती और भ्रष्ट नेतागिरी, अवसरवादिता तथा टुनाई पाठक और उसके अधिकारी रिश्तेदारों के अत्याचार के और नौकरशाही की रिश्वत खोरी तथा जमींदारों के अत्याचारों के विरुध्द संघर्ष करने के लिए कॉमरेड बाबू श्यामसुंदर सिंह की सहायता से किसान सभा और नवजवान संघ निर्माण करते हुए आंदोलन चलाते हैं। इस उपन्यास में भीषण अकाल की स्थिति और उससे निर्मित परिणामों का भी सजीव चित्रण मिलता है।

"वरुण के बेटे" में चित्रित मोहन माँझी मलाही गोंदियारी मछुओं का संगठन बनाकर गढ पोखर पर जबरदस्ती अधिकार जतानेवाले जमींदार, उनके अत्याचार और कानुनी विसंगति के विरुध्द संघर्ष करता रहता है। यही मछुआ संघ अपनी किसान सभा के द्वारा बाढ पीडितों के लिए आर्थिक मदद का कार्य भी करता है।

"कुंभीपाक" में वेश्या जीवन के नरक से परावृत हुई चंपा रायसाहब की सहायता से "शिल्पकुटीर" संस्था द्वारा पीडित नारियों की आर्थिक स्वाधीनता के लिए टाइपराइटर संस्था, सिलाई - बुनाई के केंद्र

चलाती है। इसके साथ दिवाकर शास्त्री जैसे मुनाफाखोर प्रकाशक और अवसरवादी, भ्रष्टाचारी मंत्री जानकी बाबू की शोषण नीतिको भी चित्रित किया है।

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में मिथिला अँचल की आर्थिक विपन्नावस्था का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। यही आर्थिक विपन्नता अनमेल विवाह, जरठ विवाह तथा बहुविवाह की जड है। जिससे नारी विक्रय होता है। तो साथ में नौकरशाही, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, नेताओं की अवसरवादीता, स्वार्थपरकता, वर्ग संघर्ष, बाढ, भूकम्प, अकाल, बीमारी आदि विपत्तियों का भी अंकन किया है। "बाबा बटेसरनाथ" और "बलचनमा" में अकाल का वर्णन अत्यंत मर्मस्पर्शी किया है। अकाल में लोग ईंटों काचूर्ण, पत्तियों, गुठलियों, पेड की छालों का और दूब की जडों का उपयोग भोजन के लिए करते थे यह वर्णन अकाल की भीषणता तथा भयावहता को स्पष्ट करने में समर्थ है।

नागार्जुन के युगीन परिस्थितियों के विवेचन से हम अनुमान कर सकते हैं कि उनके सभी उपन्यासों में समसामायिक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का यथार्थ वर्णन दिखाई देता है। नागार्जुन के उपन्यासों की आधारभूमि सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिति रही है, जो उनकी साम्यवादी दृष्टी का परिचायक है। उनकी धर्म भावना बाह्याडम्बरों और अंध-विश्वासों से मुक्त होकर मानवता की परिधि को स्पर्श करती है। साथ ही उन्होंने परंपरागत रुढियों का विरोध करते हुए सुधारवादी समाधान भी प्रस्तुत किया है। आर्थिक विषमता को लक्ष्य करते हुए साम्यवादी वर्ग विहीन समाज की निर्मिति करना ही लक्ष्य माना है। इस प्रकार वे समाज के विभिन्न अंगो को

अभिव्यक्ति देने में तथा यथार्थ चित्रण करने में सफल रहे हैं। उनके उपन्यासों में जिन परिस्थितियों का चित्रण दिखाई देता है। उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नागार्जुन की साहित्यिक चेतना युगानुरूप परिवर्तित होती गयी है। इसमें जरा भी संदेह नहीं है।

0-0-0-0-0-0-0